REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 7 | APRIL - 2019

मा. कांशीराम का संघटनात्मक असली और सक्षम नेतृत्व

डॉ. पी. एस. चंगोले
वाणिज्य विभाग प्रमुख, धनवटे नॅशनल कॉलेज, नागपूर.

आज चाहे चमचा युग की चुनौती का सामना करने के लिये हो चाहे चमचा युग को समाप्त कर उज्वल युग में जाने के लिये हो, पीडित–शोषित समाज की सबसे बढी आवश्यकता है संघटनात्मक असली और सक्षम नेतृत्व की।

हम सभी जानते है कि जब बाबासाहेब उज्जवल युग की दिशा मे हमारा मार्गदर्शन कर रहे थे तो उन्होने हमारे लिए उच्च शिक्षा के अवसरों की व्यवस्था करायी थी। उनका दृढ विश्वास था कि केवल उच्च शिक्षित नेता ही चमचा युग की चुनौती का सामना कर सकते है काका कालेलकर रिपोर्ट का निम्न अंश इस बात को सिध्द कर देगा :–

"**प्रश्न 1 :** भारत की स्थिती के सन्दर्भ मे आपके अनुसार वह क्या चीज है जिससे पिछडापन होता है?
डॉ. आम्बेडकर : यदि मुझे भारत की बेहतरीन और प्रगति करने के लिये कुछ करने लायक स्थिती में छोड दिया जाय तो में जनसामान्य के सामाजिक स्तर पर नजर डालूँगा। यहॉ भारत में लोगों के विभिन्न सामाजिक स्तर हैं, कुछ सर्वोच्च स्थिति में है, कुछ उनसे भी नीचे और कुछ एकदम नीचे। हमारी इतनी बडी समस्या प्रत्येक को सुखी बनाने के लिये सम्पत्ति वितरित करने की नहीं है बल्कि हमारी समस्या यह है कि विभिन्न अलग–अलग हैसियत या स्तर समाप्त होना चाहिये। ये शिक्षा की प्रगती के द्वारा ही समाप्त हो सकते है जब सभी समुदायों को शिक्षा के मामले में एक समान स्तर पर लाया जा सके, व्यक्तियों के सन्दर्भ में नही बल्कि समुदायों के तुलनात्मक संदर्भ में। यदि किसी समुदाय में दस बैरिस्टर, बीस डॉक्टर, तीस इन्जीनियर आदि है तो मै उस समुदाय को समृध्द जैसा मानता हूँ हालाँकि उसमें सभी व्यक्ति शिक्षित नहीं होंगे। उदाहरण के लिये चमारों को ही ले लें, आप इस जाति को घृणा की नजर से देखते हैं परन्तु यदि उनमें डॉक्टर, वकील, इंजीनियर और शिक्षित लोग हों तो आप उनको हाथ नहीं लगा सकते।

प्रश्न 2 : भारत की उन विभिन्न जातियों के पिछडेपन को तेजी से दूर करने के लिये आपके क्या सुझाव हैं जो युगों पुराने सामाजिक पिछडेपन तथा शैक्षिक उदासीनता से पीडित हैं ?
डॉ. आम्बेडकर : जैसाकि मैंने सुझाव दिया है यदि आप उनमें बडे लोग बनायें तो पिछडापन दूर होगा। पिछडापन एक प्रकार की हीनभावना मात्र है।"

प्रश्न संख्या 1 के उत्तर में दिये गये लम्बे जवाब में उनका कहना था कि पिछडापन दूर करने के लिये आपको उनमें उच्च योग्यता वाले और उच्च शिक्षा प्राप्त लोग तैयार करने होंगे और फिर उन्हे महत्वपूर्ण पदों पर बैठाना होगा। तब वे किसी प्रकार के गलत कामों को किये जाने से रोक सकेंगे।

अपने जीवन के अन्तिम काल में 1954 में बाबासाहेब के ऐसे विचार थे। किन्तु दो वर्षों की अवधि के अन्दर ही हमारे प्रिय डॉक्टर ने एक नये रोग का पता लगा लिया और जिसके मालूम होने पर उन्होंने ऊँचे पदों पर बैठे इन उच्च शिक्षा प्राप्त लोगों की प्रशंसा करने के बजाय उनको फटकार लगा दी। ऊँचे पदों पर बैठे इन उच्च योग्यता वाले स्तर के लोगों की आलोचना उन्होंने आगरा की एक सार्वजनिक सभा मे 18 मार्च

1956 को खुल कर और सरेआम की। इस बीमारी का पता लगाने के बाद आगामी आठ महीनों के दौरान वे न तो रोग के कारण और न उसके उपचार के उपाय के लिये समय निकाल सके।

1954 में डॉ. अम्बेडकर 10 वकीलों, 20 डॉक्टरों और 30 इंजीनियरों की बात सोच रहे थे। किन्तु ऐसे उच्च योग्यता प्राप्त लोगों की संख्या आने वाले समय में लाखों तक पहुँच गयी। डॉ. अम्बेडकर के बदौलत मिले अवसरों के कारण ही उन्हें ऊँचे–ऊँचे पद और प्रतिष्ठा मिल सकी। किन्तु कितनी बडी विडम्बना है कि जैसे–जैसे इसमें वृध्दि होती गयी वैसे–वैसे यह बीमारी और फैलती गयी और फैलते–फैलते एक महामारी बन गयी। इस बीमारी ने बाबासाहेब के उस सोच को ही मार डाला जिसे वे वर्षों से अपने सीने से लगाये पाल–पोष रहे थे। उनके प्रयासों और सपनों से उत्पन्न उच्च पदस्थ ऊँची योग्यता और हैसियत वाले लोग वरदान बनने के बजाय पीडित–शोषित जातियों के लिये ही नहीं बल्कि पूरे दलित समाज के लिए अभिशाप बन गये। उनकी जातियों के साथ होने वाले जुल्म–ज्यादतियों को रोकने के बजाय वे ऐसी अनेक अतिरिक्त ज्यादतियों को बढाने का कारण बन गये।

बामसेफ ने अभिजात्यों के विमुखीकरण या कटाव पर आंशिक काबू पाकर बीमारी को भी आंशिक रुप से दूर कर लिया है। भविष्य में "असली और सक्षम" नेतृत्व का स्थायी स्त्रोत बना कर यह बीमारी को स्थायी रुप से और पूरी तरह दूर करने में सक्षम होगा।

मा. कांशीराम व्दारा बामसेफ का निर्माण

इतिहास और वर्तमान के इसी संयोग से कांशीराम ने अपनी स्वतंत्र राजनीतिक यात्रा प्रारंभ की और 6 दिसंबर 1978 को अपना पहला संगठन बनाया जिसका नाम था– आल इंडिया बेकवर्ड (अनुसूचित जाति, जन जाति और अन्य पिछड़ा वर्ग) एंड माइनारिटी कम्युनिटीज एम्लाईज फेडरेशन। संक्षेप में इस संगठन को बामसेफ के नाम से जाना गया। कांशीरामने इसे पूरी तरह अनौपचारिक, अपंजीकृत और गैरधार्मिक, गैरआंदोलनात्मक और गैरराजनीतिक संगठन के रूप में बनाया। आंदोलन और राजनीति से खुले तौर पर बामसेफ को दूर रखना आवश्यक था क्योकि सरकारी कर्मचारियों की राजनीति में हिस्सेदारी की मनाही होती है। लेकिन बामसेफ के पीछे मकसद स्पष्ट रूप से राजनीतिक ही था। कांशीराम उसे बहुजन आंदोलन के केंद्रक के रूप में तैयार करना चाहते थे।

पे बॅक टू दी सोसायटी की विचारधारा

बामसेफ अपनी आप में एकदम नए तरह का विचार था। सवर्ण अफसरों की जातिवादी ज्यादतियों के खिलाफ संघर्ष चलाते ही इसके पैर गए लेकिन इसकी मंजिल कर्मचारियों की यूनियन के रूप में सीमित हो जाना नहीं था। कांशीराम चाहते थें कि यह शिक्षित कर्मचारियों का संगठन तो बने लेकिन शिक्षित कर्मचारियों के लिए ही काम न करता रहे। इस संगठन के शिक्षित कर्मचारियों से उम्मीद की जाती थी कि वे उत्पीडित समाज के अन्य सदस्यों की मदद करेंगे और इस तरह बहुजन समाज आंदोलन के लिए ब्रेन बैक, टैलेंट बैंक और फाइनेशियल बैंक बन जाएंगे। जल्दी ही बामसेफ से पांच सौ पीएचडी, तीन हजार एमबीबीएस, एमएस, एमडी, 15 हजार वैज्ञानिक और 70000 अन्य स्नातक और स्नातकोत्तर डिग्री धारी कर्मचारी जुड गए।[32] अधिकांश सदस्य महाराष्ट्र और उप्र के थे और अनुसूचित जाति के थे। पिछड़े वर्ग के कर्मचारी सबसे ज्यादा उप्र के ही थे।

कांशीराम मंडल स्तर और प्रांत स्तर पर भी संयोजक नियुक्त करते थे। मंडल सयोजक प्रांत और जिले के बीच कड़ी का काम करता था। प्रांत संयोजक सभी संयोजकों के बीच तालमेल रखता थां कांशीराम ने बामसेफ सदस्यों को चुनाव प्रचार में भाग लेने के लिए कभी उत्साहित नही किया। और न ही बामसेफ का सदस्य होने के लिए बीएसपी को वोट देना जरूरी माना–लेकिन बामसेफ के गठन का अंतर्निहत तर्क था ही ऐसा कि उसके सदस्य बसपा के राजनीतिक उपादान बने बिना नहीं रह सकते थे।

बामसेफ ने बसपा के विकास में भारी योगदान किया। पार्टी कर खर्च निकालना और प्रतिभाशाली कार्यकर्ता सप्लाई करते रहना कोई छोटी–मोटी जिम्मेदारी नहीं थी। कांशीराम ने बामसेफ के पीछे अपनी अवधारणा की व्याख्या इन शब्दों में की–

बामसेफ के पीछे धारणा है – समाज को वापस देना। बामसेफ यह बसपा के लिए दिमाग, प्रतिभा और कोष जुटाता है। लेकिन 1985 में मैने इसे छाया संगठन में बदल दिया। अब इसका सार तत्व केवल मेरी निगाह में है और केवल मैं ही इसका पदाधिकारी और सदस्य रह गया हूं । देश के करीब चार सौ सर्वोच्च सिविल सर्वेंट बसपा के ब्रेन बैंक है। बामसेफ के 26 लाख अनुसूचित जाति–जनजाति के कर्मचारी कार्यकर्ता सारे देश में फैले हुए है। उनकी शुद्ध आय दस हजार करोड सालाना है। वे बसपा को कोष सप्लाई करते है। आखिरकार बसपा का मासिक खर्चा एक करोड रुपये है।[33]

मा. कांशीराम के इस कथन से दो बातों का अंदाजा लगता है– उनके आंदोलन में आरक्षण के जरिए नौकरी पाए कर्मचारियों का महत्व कितना ज्यादा है और उन कर्मचारियों पर कांशीराम की व्यक्तिगत पकड़ कितनी मजबूत है।1984 में बसपा के निर्माण के बाद कांशीराम ने बामसेफ को पूरी तरह पृष्टभूमि में धकेल दिया। यह संगठन लगभग आंखो से ओझल हो गया लेकिन इसका वजूद नहीं मिटा। घुमा फिरा कर बामसेफ के लोग बसपा से जुड़ गए। मायावती और राज बहादुर जैसे नेतृत्वकारी साथी बामसेफ से ही निकले। बसपा के चुनाव दफ्तरों का संचालन हो या चुनाव में खर्च होने वाले पैसे का लेखा–जोखा हो, बामसेफ के लोग ही इन चीजों पर नियंत्रण करने लगे। स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार चुनावी रणनीति निर्धारित करने का काम भी बामसेफ के हाथ में चला गया। बामसेफ के कई संस्थापक सदस्य बसपा के जरिए अपनी बढ़ती हुई राजनीतिक भूमिका से रोमांचित भी हुए लेकिन कुछ के मन में शंकाएं भी पनपीं दूसरी ओर सीधे–सीधे बसपा में आए पूर्णतः राजनीतिकृत नेताओं और कार्यकर्ताओं ने इस अपंजीकृत छाया संगठन की पार्टी पर चौधराहट को नाराजगी से देखा। इस तरह बामसेफ वालों और बसपा के बीच एक तरफ तो गर्भनाल का संबंध था और दूसरी तरफ अंतविरोध की बुनियाद भी पडी। शुरु में ये अंतविरोध मित्रतापूर्ण रहे लेकिन बाद में उन्होंने नुकसानदेह स्वरुप भी अख्तियार करना शुरू कर दिया। बसपा वालों का आरोप था कि बामसेफ वालों को फील्ड का अनुभव नही होता और जब उन्हें इस बारे में जानकारी दी जाती है तो भी वे इस पर ध्यान नहीं देते। बसपा वालों ने कई बार कांशीराम द्वारा बामसेफ के सलाह मशविरे पर ज्यादा ध्यान देने की शिकायत की।

डीएस–फोर खुला संगठन बनाया था जिसे बसपा का पूर्वाभ्यास कहा जा सकता था।

सामाजिक तथा राजनीतिक लोकतंत्र स्थापित करने के लिये
मा. कांशीराम द्वारा योजनाबध्द अल्पकालिक समाधान (सामाजिक कार्रवाई)
दलित शोषित समाज संघर्ष समिती (डी. एस – 4)
स्थापना 6 डिसेंबर 1981 संस्थापक : कांशीराम

अभिजात्यों के विमुखीकरण जैसी सबसे बुरी बीमारी से भी जो निपट सके ऐसे असली और सक्षम नेतृत्व का प्रबन्ध करने के पश्चात अब हम समस्या पर आते हैं। चमचा युग की समस्या के सफलतापुर्वक समाधान के लिये हमें इसको निम्न प्रकार तीन भागों में विभाजित करना चाहिये :–

अ) चमचा युग की चुनौती का सामना करना।ब) चमचा युग का अन्त करना।

क) उज्जवल युग मे पदार्पण।

अब समस्या को व्यवस्थित रुप से और उचित तरीके से विभाजित कर लेने के पश्चात हम समस्या को एक–एक कर के सुलझा सकते हैं। मेरे ख्याल से समस्या को एक–एक करके हाथ में लेने से हम काम को दस वर्षों के अन्दर पूरा कर सकते हैं। इन तीन भागों को हम समाधान के लिहाज से (अ) अल्पकालिक (ब) दीर्घकालिक और (क) स्थायी – तीन नामों से जान सकते हैं।

सामाजिक कार्रवाई

दलित–शोषित समाज नीचे गिरा पडा है और नीचे पडी स्थिति से समझौता किय हुये है। यह हमारे समाज का एक विशाल भाग है इसलिये इतने विशाल भाग की निम्न स्थिति और पिछडी हालत देश को भी निम्न और पिछडा बनाये हुये है। इस विशाल वर्ग को जागरुक होना चाहिये, उठ खडे होना चाहिये और अपने काम में जुट जाना चाहिये। उसकी जागरुकता और चेतना के पश्चात इस विशाल वर्ग के ऐसे काम को हम "सामाजिक कार्रवाई" का नाम दे सकते हैं।

(1) चेतना उभारने के लिये जागरुकता पैदा करना

हमें अपने समाज के इस विशाल वर्ग को जागरुक बनाने के लिये कई विचारपूर्ण कदम उठाने की आवश्यकता है। ऐसे विचारपूर्ण कदम दो प्रकार के हो सकते हैं –

(अ) सामान्य, (ब) विशिष्ट, जो मुद्दों पर आधारित हों।

(अ) सामान्य कदम सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक पहलुओं से जुडे हो सकते हैं। इतने व्यापक दायरे के कदम उठाने की आवश्यकता क्यों है? इस लिये हैं क्योंकि दलित–शोषित समाज इन सभी मोर्चों पर बिल्कुल अन्धकार में और अज्ञान में है। उनको प्रबुध्द बनाने के लिये इन सब मोर्चों पर जागरुकता परम आवश्यक है। यदि और जब तक वे जागरुक नहीं हो जाते हैं तब तक वे सचेत नहीं हो सकते हैं और जब तक वे सचेत नहीं हो जाते हैं तब तक वे निकटता पूर्वक जुड नहीं सकते हैं। अतः उनके जुडाव और सम्बध्दता के लिये व्यापक जागरुकता की अति आवश्यकता है।

(ब) जागरुक बनाने के लिये विशिष्ट कदम मुद्दों पर आधारित हैं। उदाहरण के लिए – अम्बेडकरवादी विचारों को प्रचारित–प्रसारित करने के लिए पहियों पर अम्बेडकर मेला लगाया गया, चमचा युग पर प्रकाश डालने के लिए पूना–पैक्ट की भर्त्सना की गयी, सिर्फ अपने छोटे–छोटे साधनों का बडे स्तरपर प्रयोग कर अपना काम चलाने की आदत पैदा करने के लिये 4200 कि.मी. दूरी की साइकिल प्रचार यात्रा का आयोजन किया जाना आदि है। विशिष्ट कदमों की जरुरत अनुसूचित जातियों/जनजातियों के ऊपर होने वाले अत्याचारों पर प्रकाश डालने के लिये है।

2) दलित–शोषित समाज को सक्रिय बनाये रखना

दलित–शोषित समाज की समस्यायें कई मोर्चों पर और सभी मोर्चों पर हैं। उन समस्याओं को सम्बन्धित जनसामान्य की सहायता से सुलझाने के लिए उन्हे जागरुक, सचेत और सक्रिय बनाना होगा। मात्र यदा–कदा अथवा अवसर विशेष पर उन्हें सक्रिय बनाने से उन सभी समस्याओं का समाधान नहीं हो सकेगा। इसलिए उन्हे सदैव सक्रिय बनाये रखना होगा।

3) नरम कार्रवाई से उग्र कार्रवाई तक

कुल मिला कर सामाजिक कार्रवाई नरम और शांतिपूर्ण किन्तु बिना रुके अनवरत चलने वाली होना चाहिये। यह एक रुप में अथवा दूसरे रुप में और किसी एक उद्देश्य के लिए या अन्य उद्देश्यों के लिये हो सकती है। इसे सार्थक और प्रभावी बनाने के लिये कभी–कभी इसे उग्र भी बनाना पडेगा, किन्तु हिंसक नहीं। यह सब संघर्षों के प्रकार पर निर्भर होगा।

योजनाबध्द सामाजिक कार्रवाई के उदाहरण

सामाजिक कार्रवाई को पूरी तरह समझने के लिए और उन कार्यकर्ताओं के लाभ के लिए जिनकी आवश्यकता सामाजिक कार्रवाई को भविष्य में सफल और प्रभावी बनाने के लिये पडेगी, यह आवश्यक है कि कुछ उदाहरण दे दिये जायें। नियोजित सामाजिक कार्रवाई के भूत, वर्तमान और भविष्य के निम्न पाँच उदाहरण देना सामाजिक कार्रवाई को समझने के लिये जनसामान्य के लिये और सामाजिक कारवाई के सफल और प्रभावी संचालन के लिये कार्यकर्ताओं को तैयार करने के लिये दोनो को उपयोगी होगी।

1) पहियों पर अम्बेडकर – मेला

अपने मुख्यालय को दिल्ली में स्थानान्तरित करने पर हमने देखा कि दिल्ली के आस–पास के प्रान्तों मे हमारे लोग बाबासाहेब के जीवन और उनके मिशन से अनभिज्ञ है। जो लोग मिशन में रुचि रखते थे और उससे अनभिज्ञ नहीं थे वे अम्बेडकरवादी मिशन की सर्वतोमुखी विफलता के कारण निराशा कर रहे थे। इस अनभिज्ञता और निराशा को दूर करने के लिये पहियों पर अम्बेडकर मेला के रुप में एक समाजिक कार्रवाई की योजना बनायी गयी। नौ प्रान्तों से जोडते हुये इसे दिल्ली के आसपास 14–4–1980 से 14–6–1980 तक दो महीने आयोजित किया गया।

2) पूना–पैक्ट का धिक्कार

चमचा युग पूना–पैक्ट की पैदाइश है। चमचा युग पर ध्यान करने के लिये पूना–पैक्ट की पचासवी वर्षगॉठ के अवसर पर उसकी भर्त्सना की गयी। पूना–पैक्ट के धिक्कार का एक व्यापक कार्यक्रम 24 सितम्बर 1982 से 24 अक्तूबर 1982 तक पूना से लेकर जालंधर तक नियोजित औरसंचालित किया गया। इस नियोजित सामाजिक कार्रवाई के परिणामस्वरुप आज लगभग पूरे भारत में सम्पुर्ण दलित–शोषित समाज चमचा युग के खिलाफ जागरुक और सचेत हो गया है। ऐसी जाग्रति और चेतना चमचा युग का मुकाबला करने में हमारी बहुत मदद करेगी।

3) जनसंसद (Peoples Parliament)

यह सोचा गया कि दलित–शोषित समाज का संसद में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नही है और जो कुछ प्रतिनिधित्व है भी वह चमचो के रुप में है जिनसे हमारा परी तरह और निष्ठापूर्वक प्रतिनिधित्व करने की उम्मीद नही की जा सकती है। इस कमी को दूर करने के लिये दिल्ली में 25 दिसम्बर 1982 को जनसंसद (पीपुल्स पार्लियामेन्ट) का अभियान शुरु किया जायेगा। दिल्ली के बाद दलित शोषित समाज की समस्याओं की चर्चा और बहस चलाते हुए इसे दुसरे स्थानों पर पूरे भारत में चलाया जायगा।

4) दो पैरों और दो पहियों का चमत्कार

संसाधनों के मामले में दलित–शोषित समाज शासक जातियों से प्रतिस्पर्धा नही कर सकता है किन्तु उसे अपना जायज हक हासिल करने के लिये न केवल प्रतिस्पर्धा करनी पडेगी बल्कि शासक जातियों को सफलतापूर्वक पराजित भी करना पडेंगा। इसेके लिये संसाधनों की आवश्यकता पडेगी। इसलिये दलित–शोषित समाज को छोटे–छोटे और सीमित साधनों को बडें रुप में उपयोग करने का तरीका सीखना चाहिये। इस प्रकार वे अपने विरोधियों की बराबरी कर सकते है। ऐसा प्रयोग करने के लिये बडे पैमाने पर साइकिल का उपयोग करने की योजना बनायी गयी है।

5) समानता के लिये प्रयास

6 दिसम्बर 1983 को डी–एस 4, जो सामाजिक कार्रवाई का संगठन हैं, दो साल का हो जायगा। उस दिन युवा डी–एस 4 व्यापक और सधन सामाजिक कार्रवाई का अभियान छेडने की योजना बना रहा है। यह सामाजिक कार्रवाई समानता के लिए होगी।

सविधान सभा को सम्बोधित करते हुये 25 जनवरी 1949 को बाबासाहेब ने कहा था–

"26 जनवरी 1950 को हम जीवन के अन्तर्विरोधो में प्रवेश करने जा रहे हैं। राजनीति में हमें समानता मिलेगी और सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में हमें गैर बराबरी ही हासिल होंगी। हम कब तक अन्तर्विरोध के इस जीवन को जियेंगे? हम कब तक अपने सामाजिक और आर्थिक जीवन में समानता से इन्कार करते रहेंगे?....."

डी. एस–4 : सामाजिक कार्रवाई का संगठन

हमारा विश्वास अपने मिशन में काम को संगठित तरीके से करने में हैं। डी–एस 4 सामाजिक कार्रवाई के लिए बनाया गया अपना संगठन है। भविष्य की सभी सामाजिक कार्रवाई डी–एस 4 द्वारा नियोजित, निर्मित और संचालित होगी।

दीर्घकालिक समाधान (राजनैतिक कार्रवाई)

जिस प्रकार चमचा युग की चुनौती का सामना करने के लिये सामाजिक कार्रवाई जरुरी समझी गयी उसी प्रकार चमचा युग को समाप्त करने के लिये राजनैतिक कार्रवाई भी आवश्यक है। दुसरी ओर हम समझते है कि चमचा युग वर्तमान राजनैतिक गतिविधी की पैदाइश है। 15 अगस्त 1947 को भारत से अॅग्रेजो के प्रस्थान के कारण सत्ता का हस्तातरण उच्च जातीय हिन्दुओं के हवाले कर दिया गया। किन्तु सत्ता हस्तान्तरण से पूर्व बालिग मताधिकार के बीज पहले ही बोये जा चुके थें। वे बीज अंकुरित हो गये और अपने स्वतंत्र संविधान के

साथ भारत के एक गणतंत्र होने तक वे दलित–शोषित समाज के विशाल वोट–बैंक का आकार ग्रहण कर चुके थे।

मौजूदा राजनैतिक कार्रवाई और इसका नतीजा

स्वंय अपनी आवश्यक राजनैतिक सक्रियता बनाने के लिये हमें मौजूदा राजनैतिक गतिविधि और इसके नतीजे को जानना–समझना जरुरी है। भारत से अँग्रेजों के जाने के बाद उच्च जातीय हिन्दुओं ने अपने बीच सत्ता की हिस्सेदारी करना शुरु कर दिया। राजनैतिक और नौकरीशाही की सत्ता–शक्ति ब्राह्मणों के हाथों लगी। अनुसूचित जातियों/ जनजातियों को 22.5% आरक्षण मिला हालॉकि उनके प्रतिनिधी शासक जातियों के हाथ के चमचे बने रहे। नौकरशाही मशीनरी में उन्हें विभिन्न स्तरों पर प्रवेश मिला। पिछले कुछ वर्षो से उन्हे केन्द्र की उच्च प्रशासनिक सेवाओं में पूरा हिस्सा मिल रहा है।

अन्य पिछडे वर्ग–बदतरीन पीडित

किन्तु सबसे बुरे पीडित अन्य पिछडे वर्ग के लोग है। अँग्रेजों के जाने के बाद उनका सर्वतोमुखी नुकसान हुआ। उनकी राजनैतिक और प्रशासनिक दोनों शक्ति–सत्ता के हिस्से को लगभग पूरी तरह उच्च जातीय हिन्दुओं, विशेषकर ब्राहमणो ने डकार लिया मण्डल आयोग की रिपोर्ट के अनुसार पिछडे वर्गो की संख्या देश की कुल जनसंख्या का 52% है जबकी ब्राम्हणों और क्षत्रियों की संख्या कुल जनसंख्या का लगभग 8 से 9 प्रतिशत है। किन्तु मौजूदा संसद में इन 8 से 9 प्रतिशत लोगों का प्रतिनिधित्व 52% सांसदो द्वारा किया जाता है जबकि 52% लोगों का प्रतिनिधित्व 8 से 9 प्रतिशत सांसद करते हैं।

तामिलनाडु और उत्तर प्रदेश–विरोधाभास का नमूना

पिछडे वर्गो की स्थिती के मामले में आज तमिलनाडू और उत्तर प्रदेश में एक दुसरे से भारी अन्तर है। तमिलनाडू मे पिछडे वर्गो को राजनैतिक और प्रशासनिक दोनों क्षेत्रो में अपना पूरा कोटा मिल रहा है और यह समयान्तराल के साथ बढता ही जाता है। जबकि उत्तर प्रदेश में पिछडें वर्ग बदतरीन मुकाम पर है हैं।

हमारी अपनी राजनैतिक पार्टी

आज भारत में राष्ट्रीय स्तर की सात राजनैतिक पार्टियॉ है और ये सातों पार्टियॉ उच्च जातीय हिन्दुओं के नेतृत्व में चल रही हैं। वे अपनी पार्टियों का नियंत्रण इस प्रकार करते हैं जिससे उच्च जातीय शासन बरकरार बना रहे। अपने बल बूते 85% वोटों के बावजुद दलित–पीडित समाज असहाय बना हुआ है। इसलिये व्यापक रुप से यह महसूस किया गया कि खुद हमारी अपनी एक राजनैतिक पार्टी होना चाहिए। विगत समय में कुछ प्रयास अवश्य किये गये किन्तु वे विफल रहे।

मौजूदा भारत में सवर्णों की राजनैतिक एवं नौकरशाही पर पकड को दर्शाने वाली सारणी 1980

	पद	कुल संख्या	केवल ब्राम्हणों की संख्या	केवल ब्राम्हणों का प्रतिशत
1.	केन्द्रीय केबिनेट मंत्री	19	10	53%
2.	मंत्रियों के निजी सचिव (केबिनेट, स्टेट एंव उपमंत्री)	49	34	70%
3.	केन्द्र में सचिव, अति.सचिव संयुक्त सचिव या समकक्ष	500	310	62%
4.	राज्य सरकारों के मुख्य सचिव	26	14	54%
5.	राज्यपाल/लेंफ्टि.गवर्नर	27	13	50%

6.	राज्यपालों / लेफ्टि. गवर्नरों के सचिव	24	13	54%
7.	सर्वोच्च न्यायालय के जज	16	9	56%
8.	उच्च न्यायालय और अतिरिक्त न्यायाधीश	330	166	50%
9.	राजदूत / उच्चायुक्त	140	58	41%
10.	उपकुलपति	98	50	51%
11.	"स्कोप" के अधीन आने वाले सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के मुख्य कार्यकारी			
	(अ) केन्द्र	158	91	57%
	(ब) राज्य	17	14	82%
12.	आई.ए.एस. अधिकारी (ऊपर से नीचे तक)	3300	2000	61%

स्त्रोत : चमचा युग, लेखक – कांशीराम, समता प्रकाशन, नागपूर, 2001, पृ. 121.

स्थायी समाधान (सांस्कृतिक परिवर्तन एवं नियंत्रण)

पिछले दो अध्यायों में हमने (1) चमचा युग का मुकाबला करने के लिये सामाजि कारवाई की आवश्यकता, और (2) चमचा युग का अन्त करने के लिए राजनैतिक कारवाई की आवश्यकता की चर्चा पूरी की। किन्तु गौरवशाली उज्ज्वल युग मे जाना हमारे सामने, इसी पीढी के समक्ष अथवा आनेवाली पीढी तक के लिये भी चुनौती भरा और कठिन काम है। इसके लिये पूर्ण सांस्कृतिक परिवर्तन और बिल्कुल भिन्न नियंत्रण की जरुरत पडेगी। केवल ऐसे ही परिवर्तन से स्थायी समाधान निकाला जा सकता है।

वास्तविक और मूलभूत समस्या

भारत में हमारी वास्तविक और मूलभूत समस्या सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक है। बाकी सारी चीजें इसी मूलभूत समस्या के परिणाम हैं। चमचा युग इसी बडी समस्या का सिर्फ एक छोटा सा परिणाम है। भारत में विचित्र धार्मिक विचारों वाला शास्त्रों का एक धर्म है। धार्मिक विचार न सिर्फ हावी रहते हैं बल्कि वे संस्कृति का भी निर्माण करते हैं। इन धार्मिक विचारों का प्रभुत्व एक ऐसी विचित्र संस्कृति में परिणत हो गया है जिसे "जातियों की संस्कृति" का नाम दिया जा सकता है। दूसरे देशों में ऐसा कहा जाता है कि धर्म व्यक्तिगत चीज है और संस्कृति साझी एवं सामूहिक चीज है। लेकिन भारत में दोनों एक ही चीज हैं।

समस्या की जड–जाति

डॉ. अम्बेडकर ने जाति के विषय में दो मुख्य पुस्तकें लिखी थीं, उनमे नाम हैं:

1) भारत में जातियाँ, उनकी उत्पत्ति और कार्यप्रणाली। 2) जातिभेद का उच्छेद।

जाति के विरुध्द उनके क्रांन्तिकारी संघर्ष और जाति के विषय में उनके अन्य लेखन को यदि दरकिनार भी कर दें तो सिर्फ इन्हीं दो निबंन्धों के आधार पर उनको जाति के विषय का महानतम अधिकारी और अध्येता कहा जा सकता है। उनके विचार के अनुसार जाति व्यवस्था एक सामाजिक व्यवस्था है जो उन हिन्दुओं के एक विकृत वर्ग की घमण्डता, अकड और स्वार्थीपन को मूर्त रुप देती है जिनके पास इसको आम प्रचलन में प्रवर्तित करने के लिये सामाजिक स्थिति में पर्याप्त ऊँचा स्थान प्राप्त था और जिनके पास इसको अपने से नीचे लोगों पर बलपूर्वक थोपने का अधिकार प्राप्त था।

ऐसी अपमानजनक व्यवस्था को लागू करने के लिये अत्यन्त कठोर और निर्मम दण्ड–विधान की आवश्यकता थी जिसकी पूर्ति मनुस्मृति ने की।

जाति व्यवस्था ने हिन्दुओं को भारत के रोगग्रस्त लोग बना डाला और उनके इस रोग ने अन्य भारतीयों के स्वास्थ्य और खुशी को भी प्रभावित कर दिया है। यह सभी भारतवासियों के लिये एक बडी समस्या बन गयी है। इस बुराई के खिलाफ तमाम लोगों ने बहुत कुछ कहा तथा और भी बहुत कुछ कहा जा सकता है। किन्तु हमें यहाँ यह कहते हुये समापन कर देना चाहिये कि जाति भारत के लिये अतीत में एक विकट समस्या रही है और आज भी यह समस्या की जड बनी हुई है।

काटने वाली दुधारी तलवार बनना शुरु हो गयी। उच्च जातीय हिन्दुओं ने खतरे को ऐसा भाँपा कि उन्होंने जनगणना रिकार्ड से जाति का कॉलम ही हटा दिया। इसीलिए आज जाति के बारे में किसी प्रामाणिक और अभिलेख बध्द जानकारी के लिये हमें पीछे पलट कर 1931 की जनगणना की और ताकना पडता है।

यह दर्शाने के लिये जाति–व्यवस्था या सामाजिक व्यवस्था किस तरह खडी है, इसी अध्याय में एक रेखाचित्र जोडा गया है। इस ढाँचे मे जातियाँ इमारत की ईटें हैं। रेखाचित्र स्वतः स्पष्ट है। व्यवस्था से लाभ लेने वालों ने पाँच बडी शक्तियों अथवा सत्ता–स्त्रोतों को हथिया लिया है। उनके नाम हैं (i) राजनैतिक (ii) नौकरशाही (iii) सामन्ती (iv) आर्थिक (v) सांस्कृतिक। रेखाचित्र में जिन्हे मध्यम जातियों के रुप में दर्शाया गया है और जो अन्य पिछडे वर्ग का हिस्सा नहीं है उन्होंने भी लाभ उठाया है और प्रगति की है हालाँकि यदि धार्मिक दृष्टि से कहा जाय तो वे भी शूद्र जातियों में ही है। जबकि व्यवस्था से पीडितजन सर्वतोमुखी रुप से और प्रत्येक मोर्चे पर नुकसान में ही रहे।[34]

अतीत में विद्रोह

हाल ही के अतीत में इस जातीय संस्कृति के विरुध्द सम्पुर्ण भारत में कई विद्रोही महापुरुषों ने बगावत का बिगुल फूँका। महात्मा ज्योतिराव फुले, पेरियर ई.वी. रामासामी, नारायण गुरु और बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के विद्रोह सर्वाधिक उल्लेखनीय हैं। उनकविद्रोह और उनमें प्राप्त सफलताओं के बारे में प्रचुर साहित्य उपलब्ध है। यहाँ हमें इस जाति संस्कृति को परिवर्तित करने के लिये उनके द्वारा अपनाये गये तरीकों पर गौर करना है। महात्मा ज्योतिबा फुले का सत्यशोधक समाज, पेरियर ई.वी.आर. का बुध्दिवाद और नास्तिकता आन्दोलन तथा बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर का बौध्द धम्म पुनर्जागरण इस परिवर्तन को सक्रिय करने के लिये अपनाये गये तरीके थे। जब हम आज इन तरीकों के अंजाम पर नजर डालते हैं तो निराशा होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस जातीय संस्कृती के पास पराजय से उबरने का मजबूत पृष्ट पोषण या समर्थन और शक्ति उपलब्ध है। लेकिन फिर भी हमारे संघर्षकर्ताओं के प्रयासों की परिणति दिमागी मुक्ति में हुई है। हमारी सक्रियता के और अधिक विस्तार करने में यह बडी यहायक और उपयोगी होगी।

भविष्य के लिये काम

विगत अनुभवों को देखते हुये यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भविष्य का काम बहुत बडा है, खासकर जब हम यह जानते है कि इस जातीय संस्कृति को इस व्यवस्था से लाभ उठाने वाले लोगों का छिपा और खुला समर्थन मिल रहा है। किन्तु "पूर्ण–असमानता" की संस्कृति को "परम समानता (Absolute Equality)" में बदलना हमारा अभीष्ट लक्ष्य होना चाहिये। वर्तमान संस्कृति व्यवस्था से लाभ उठाने वाले लोगों द्वारा नियंत्रित है। किन्तु परिवर्तित "परम समानता" की संस्कृति सदैव वर्तमान व्यवस्था से पीडित होने वाले लोगों के हाथों में ही रहना चाहिये। ऐसा करना भितरघात या तोडफोड और विध्वंस से बचने के लिये निहायत जरुरी है। मौर्य साम्राज्य के पतन से सीखने लायक यही सबक है।[35]

मा. कांशीराम ऐसे नेता थे जिनका कद शायदही उनके समयके किसी नेतासे मेल खाता हो। उन्हाने जाहिर कर दिया था की मेरे सपनों का भारत सम्राट अशोक के भारत जैसा रहेगा । जहॉ कोईभी दादागिरी नही कर पायेगा।

संदर्भ –

1. येवगोनिया युरलोवा, पालिटिकल इमर्जेस ऑफ शेडयूल कास्ट इथनोकम्युनिटी, मेनस्ट्रीम, 12 अक्तूबर, 1991
2. अभय कुमार दुबे, कांशीराम, राजकमल प्रकाशन, 1997, पृ. 36.
3. कांशीराम, चमचा युग, समता प्रकाशन, नागपूर, 1998, पृ. 17
4. उपरोक्त, पृ. 53
5. उपरोक्त, पृ. 57
6. चंद्रकांत मुगले, डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांच्या राजकीय संघटनांची वाटचाल, सिध्दार्थ प्रकाशन, 1995, पृ. 9
7. कांशीराम, उपरोक्त, पृ. 93
8. उपरोक्त, पृ. 94
9. सतनाम सिंह, बहुजन नायक कांशीराम, सम्यक प्रकाशन, 2005, पृ. 116
10. धनंजय की, डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर, पॉप्युलर प्रकाशन, मुंबई, 1994, पृ. 466
11. बहुजन नायक, 14 एप्रिल 1995, पृ. 5
12. चंद्रकांत मुगले, उपरोक्त पृ. 22–23
13. पी. एस. चंगोले, बहुजनों, भारत के शासक बनो, गुरू रविदास प्रकाशन, नागपूर, पृ. 28
14. उपरोक्त, पृ. 34
15. कांशीराम, उपरोक्त, पृ. 40
16. कांशीराम, बामसेफ एक परिचय, 1981, पृ. 13
17. उपरोक्त, पृ. 19
18. गेल ऑमव्हेट, वासाहतिक समाजातील सांस्कृतिक बंड, सुगावा प्रकाशन पुणे, पृ. 68
19. कांशीराम, उपरोक्त, पृ. 107
20. कांशीराम, बामसेफ एक परिचय, 1981, पृ. 11
21. अभय कुमार दुबे, उपरोक्त, पृ. 44
22. गेल ऑमव्हेट, उपरोक्त, पृ. 112
23. ए.आर.अकेला, कांशीराम प्रेस के आइने में, 2001, पृ. 37
24. ए. आर. अकेला, उपरोक्त, पृ. 59
25. अभय कुमार दुबे, उपरोक्त, पृ. 45
26. ए.आर. अकेला, उपरोक्त, पृ. 46
27. कांशीराम, उपरोक्त, पृ. 79
28. कांशीराम, उपरोक्त, पृ. 80
29. अभय कुमार दुबे, उपरोक्त, पृ. 40
30. कांशीराम, उपरोक्त, पृ. 103
31. कांशीराम, उपरोक्त, पृ. 111
32. कांशीराम, बामसेफ एक परिचय, 1981, पृ. 21
33. ए. आर. अकेला, उपरोक्त, पृ. 12
34. कांशीराम, उपरोक्त, पृ. 126
35. उपरोक्त, पृ. 127

LBP PUBLICATION